North Asian International Research Journal of Multidisciplinary

CIF IMPACT FACTOR:4.465

ISSN: 2454-2326 Vol. 3, Issue-10 October-2017

समाज और धर्मांधता–हाल ही घटित घटनाक्रम के सन्दर्भ में

चंचल रानी(विद्यार्थी)

देवों की भूमि कहे जाने वाला हमारा भारत देश अपनी धार्मिक सहिष्णुता व सांस्कृतिक विविधता के कारण विश्वभर में विख्यात है और भारतीय संविधान के तहत देश को एक गणतंत्र राष्ट्र के रूप में घोषित किया गया है। भारतीय आबादी का 80 फीसदी लोग हिन्दु धर्म जबकि इस्लाम 13.5, सिख 1.9, इसाई 2.3 और 5.7 बौद्ध धर्म का अनुसरण करते है। हिन्दू धर्म विश्व के प्राचीनतम धर्मों में से जाना जाता है, जिसके कारण इसे सनातन धर्म भी कहा जाता है। विश्व की प्राचीनतम सभ्यतांए नष्ट हो गई परन्तु भारत की सभ्यता एक मात्र ऐसी सभ्यता रही जो आज भी जीवित है। 2008 की जनगणना के अनुसार विश्व में हिन्दू जनंसख्या वाले अधिकतम 20 राष्ट्र है। जिस देश पर अनेकों महापुरूषों ने जन्म लिया ऐसी पवित्र भूमि की अनेकों गौरव गाथाएं है, जिनका बखान कर पाने में शायद मेरी जीव्हा साथ न दे। जिसके गौरव का गुणगान देश के बाहर ले जाकर करने वालों में सबसे अग्रणी व महान महापुरूष स्वामी विवेकानंद जी को सर्वप्रथम मेरा नमन।

एक वक्त था जब साधु, संत, महात्मा बनने के लिए इंसान को कई प्रकार का तप, साधना, योग तपस्याओं से गुजरना पड़ता था। वर्षों की कड़ी तपस्याओं व साधना के बाद जाकर उन्हे सिद्धि प्राप्त होती थी और जो हर किसी के लिए संभव न थी। ऐसे अनेकों उदाहरण इतिहास में मिलेंगे और जो इनमें सक्षम थे उन्हे समाज में अलग ही स्थान प्राप्त था, अत्यन्त पुजनीय और सत्ता के गलियारों व उसकी चमक, दमक से एक विशेष दूरी बनाने में अपना धर्म समझते थे। आध्यात्म व भक्ति मार्ग पर चलने, मोक्ष प्राप्ति हेतु ये सांसारिक भोगविलास, सुख–सुविधाओं को बाधाओं के रूप में देखते थे व इनका परित्याग आवश्यक समझते थे। इतिहास में ऐसे अनेकों उदाहरण हैं जिनके पास नाम, शोहरत, पैसा, सत्ता, शक्ति सब होने के बावजूद इन भौतिक सुख–सुविधाओं से जिनका मोह भंग होता दिखाई पड़ता है, परन्तु वर्तमान परिस्थिति इसके बिल्कुल विपरीत है। आज तथाकथित कुछ स्वार्थी ढ़ोंगीयों की वजह से पूरे संत समाज की गरिमा को ठेस पहुंचती है। ऐसे ढ़ोंगी पाखंडीयों ने साधु, संत, महात्मा की अपनी अलग ही परिभाषिक शब्दावली गढ़ी है। जिनकी दृष्टि में बाबा बनना मतलब नाम, शोहरत, पैसा, सत्ता, शक्ति सब हासिल करना और यह एक अच्छे व्यापार के रूप में फलीभूत है। एक ऐसा व्यापार है जिसमें आप असफल हो ही नहीं सकते। भक्तों की हर तरफ से आपार कृपा बरसती है। ऐसे ढोंगी पाखंडीयों की आज हमारे समाज में कोई कमी नहीं है, जिन्होंने समय–समय पर राष्ट्र की छवि को धूमिल करने में कोई कोर कसर छोड़ी हो। जिसका ज्वलंत उदाहरण हाल ही घटित हरियाणा राज्य के पंचकूला में हिंसा व आगजनी के विभत्स रूप में देखा जा सकता है। अतः सर्वप्रथम् यहां 'धर्म' के वास्तविक स्वरूप को समझ लेना आवश्यक हैः–

''धारणाद्धर्ममित्याहुः धर्मो धारयते प्रजाः।
यत्स्याद्धारणसंयुक्तं स धर्म इति निश्चयः।।''

धर्म का शाब्दिक अर्थ – धर्म शब्द की उत्पत्ति संस्कृत भाषा के 'धृ' धातु से हुई है, जिसका अर्थ है 'धारण करना' अर्थात सत्य, अहिंसा, अस्तेय, बृह्मचर्य, अपरिग्रह, शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय, क्षमा आदि धारण करने से है।

मनु ने धर्म के 'दस' लक्षण बताये हैंः–

''धृतिः क्षमा दमोस्तेयं शैचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विधा सत्यमक्रोधों दशकं धर्मलक्षणम्।।''

अर्थात धैर्य, क्षमा (क्षमाशील होना), संयम (दम) अपनी वासनाओं पर संयम, अस्तेय (चोरी न करना), पवित्रता (शौच) आंतरिक व बाहरी पवित्रता, इन्द्रिय निग्रहः (इन्द्रियों का नियंत्रण), धी, विद्या, सत्य, क्रोध आदि।

इस प्रकार धर्म मनुष्य में मानवोचित गुणों का विकास कर उसे अन्य प्राणियों से भिन्न करता है। धर्म में ही मनुष्य जीवन की श्रेष्ठता निहित है। मानव पर नियंत्रण बनाये रखने व उन्हे सही मार्ग की तरफ प्रशस्त करता है।

हालांकि भारत भूमि पर विविध धर्मों को मानने वाले अनेकों मत–मतान्तर, विभिन्न प्रान्तों, जातीयों, सम्प्रदायों के बावजूद धार्मिक परिभाषिक शब्दावली एक ही संदेश देती है 'मानवता' का। इस प्रकार ईश्वर प्रदत्त प्रकृति जो सभी के लिए सम्मान भाव से समर्पण करती है, बिना किसी भेदभाव के उसी प्रकार धर्म भी सभी के लिए ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' अर्थात् सारी धरती को अपना घर समझो, कि भावना को समाहित किये हुए हैं सभी के लिए सम्मान भाव है।

शास्त्रों ने लिखा गया है कि

''आहार निद्रा भय मैथुंन च, सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम्।
धर्मो हि तेषामधिको विशेषः, धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः।।''

अर्थात मनुष्य खाने, पीने, सोने, भय, मैथुन आदि में इंसान व पशु में समान है, केवल धर्म ही मनुष्य को अन्य प्राणियों से भिन्न करता है और धर्महीन मनुष्य पशु समान है।

धर्मांधता –

अर्थात धर्म+अंधता यानि धर्म का अंधापन, धार्मिक अंधश्रद्धा, अंधविश्वास। विश्वास एक जागरूक सचेत अवस्था है, जबकि अंधविश्वास अचेतन अवस्था है। मन, दिमाग, सोच–विचार, की अवस्था जब शून्य में चली जाती है, अर्थात विवेक शून्य श्रद्धा। जहां व्यक्ति अपनी बुद्धि, विवेक का प्रयोग न करते हुए दूसरों के अनुसार आचरण करता चला जाता है। फिर

चाहे वह न्याय के विरूद्ध ही क्यों न हो। वह उसे सही ही जान पड़ता है। इस प्रकार के व्यक्ति दूसरों के धर्म व संस्कृति हेय दृष्टि से देखते है। कूपमंडूक की भांति इन व्यक्तियों की भी समस्त दूनिया उस कुएं तक ही सीमित होती है। उससे बाहर न वह सोच पाता है न समझ पाता है। अपने आप पर भरोसा न करके अंधश्रद्धा के हाथोंहाथ चमत्कार की उम्मीद लिये भटकते हैं। ऐसी संकीर्ण मानसिकता के व्यक्ति बड़ी आसानी से पाखंडी धर्म गुरूओं के जाल में फस जाते हैं और जिनका उपयोग कैसे करना है। पांखडी धर्म गुरू भली भांति जानते हैं। इस प्रकार की धर्मांधता को 'देनी दिदेरो' (प्रबोधनकाल के महान फ्रांसीसी दार्शनिक) ने स्पष्ट करते हुए कहा है कि ''धर्म के नाम पर बने पागल सबसे खतरनाक होते हैं, और जो लोग समाज में गडबडी पैदा करना चाहते हैं, वे अच्छी तरह से जानते हैं कि किसी विशेष अवसर पर इन पागलों का इस्तेमाल कैसे करना चाहिए।''

समाज –

व्यक्तियों का एक समूह है जो सामाजिक संबंधों की एक व्यवस्था है जिसमें भांति–भांति के लोग निवास करते हैं यही समाज एक सुसंगठित राष्ट्र का निर्माण करता है। अगर समाज के सदस्य ही भिन्न–भिन्न भागों में धार्मिक द्वेष, अंधविश्वासों के चलते समाज में अपना नकारात्मक स्वरूप प्रदर्शित करते हैं तो देश में बाहरी शक्तियों को प्रवेश करने से कोई नहीं रोक सकता।

बड़े दुखद का विषय है आज हमारी पवित्र मातृभूमि पर लोगों में जो धर्म का परिवर्तित बिगड़ा हुआ रूप आये दिन देखन, सुनने को आ रहा है व धर्म के नाम पर गुमराह करने वाले पाखंडी साधु, संत, महात्मा जैसे नामों की गरिमा पे कलंक कहे जा सकते हैं, जो योग साधना में कम और भोग साधना में ज्यादा लिप्त नजर आते हैं। इस तरह के तथाकथित बाबाओं की करतूतों से हमारे देश की अस्मिता व लोकतंत्र को शर्मसार करने वाली घटनाएं आये दिन हो रही हैं जो बाह्य आडम्बरों व व्यक्तिगत राजनीतिक स्वार्थों हेतु भक्तों की फौज भविष्य को दृष्टिगत रखते हुए तैयार करते हैं। ऐसे बाबा लोग भोले–भाले भक्तों के कंधे पर रखकर हथियार चलाते हैं। ये भक्त भी अंधे भक्तों की श्रेणी में ही रखे जा सकते हैं। जिनके पास आंखें तो है पर देख नही सकते, दिमाग है पर सोच नही सकते, जिनके पास खुद के पैर हैं पर चलना उन्हे कदम पर कदम रखके ही है। जिनकी तार्किक क्षमता शायद क्षीण हो चुकी है और ऐसे भक्तों के दम पर बाबा लोग समाज में राज करते हैं व सत्ता और सिहांसन को अपनी मुट्ठी में लेकर घूमते हैं, शासन–प्रशासन उनके हाथ की कठपुतलियां होती हैं क्योंकि राजनेताओं को तो वोट की राजनीति करनी होती है उनके लिए ये बाबा लोग वोट बैंक है व बाबा लोगों के लिए ये राजनेता, सत्ता, शक्ति सब अलादीन के उस चिराग की तरह होती है। जिससे ये अपने सारे काम बनवाने और काले कारनामों को एक सुरक्षा कचव प्रदान करते हैं ऐसे में हमारी पवित्र धार्मिक संस्कृति इन पाखंडी धर्म गुरूओं के एक बिगड़े हुए पंगु समाज के रूप में तबदील होती जा रही है जो भारत देश पूरे विश्व में अपनी महान धार्मिक संस्कृति के लिए जाना जाता है। वह आज इन धर्म कंटकों के जाल में फंसकर विश्व धरातल पर अपनी पवित्र धार्मिक पहचान खोता नजर आ रहा है कि आज विदेशी राष्ट्रों को दुनिया में घूमने आये अपने नागरिकों को यह चेतवानी देनी पड़ती है कि भारत उनके लिए संवेदनशील है, वे अपनी सुरक्षा को खासा

ध्यान रखे जो देश दुनिया में सबसे ज्यादा सुरक्षित स्थानों मे से जाना जाता है, आज उस राष्ट्र के प्रति विदेशी राष्ट्रों के बयान भारतीय धर्म व संस्कृति के बदलते परिदृश्य व उसके भविष्य पर सोचने को मजबूर करते हैं।

अतः धर्म के नकारात्मक स्वरूप को यहां 'डॉ. डंडा लखनवी' इन पंक्तियों से स्पष्ट समझा जा सकताह है–''धर्म–धर्म रहता नहीं, बन जाता दुकान। गायब हो जाते जहां, सदाचार प्रतिमान।।''

राजनीति और धर्म–

'डॉ. श्री राम मनोहर लोहिया'– ''राजनीति अल्पकालिन धर्म है और धर्म दीर्घकालिन राजनीति है'' स्पष्ट है कि दोनों के अलग कार्य क्षेत्र देखने को मिलते है। धर्म के दायरे में नैतिकता समाहित होती है और राजनीति नैतिकता की रक्षा हेतु समाज की नकारात्मक प्रवृतियों के विरूद्ध लड़ने से है।

इस प्रकार धर्म जब अपने अधिकार व कर्तव्यों से विमुख, पथ भ्रष्ट व्यक्तिगत स्वार्थों से फलिभूत धर्म में राजनीति चलने लगती है व राजनीति अपने उतरदायित्व निभाने में असमर्थ व राजनीतिक स्वार्थों की पूर्ति हेतु अपनी मर्यादाएं जब भूल जाती है, तो उसके भयंकर परिणाम देखने को मिलते है, बिलकुल हाल ही घटित पंचकूला जैसे जहां राजनीति स्वार्थो कि बलि चढ इंसानियत का कैसा नगां नाच देखने को मिलता है। शासन व प्रसाशन अपने उत्तरदायित्व निभाने में नाकाम रहते है, या यें कहें की वोट बैंक की राजनीति के चलते वह कोई उत्तरदायित्व निभाना नहीं चाहते।

इस प्रकार स्पष्ट है कि धर्म में राजनीति पूरी तरह से प्रविष्ट हो चुकी है व ढ़ोंगी, पाखंडी के लिए अपने मनमाने काम निकलवाने, राजनीति सत्ता व शक्ति का प्रयोग समाज में प्रभुत्व हेतु आवश्यक भी है ताकि अपने अंध भक्तों पर प्रभाव जमाया जा सकें। आज वही दिखता व बिकता है, जिसके साथ कोई बड़ा नाम, चमक–दमक, टैग, सत्ता–शक्ति, संपंनता, भैड़ो की भीड़। फिर चाहे वह धर्म ही क्यों न हो, ऐसे में गली–कुचों में फिरनें वाले सद्पुरूषों, सच्चे साधुओं को भी इतना कोई नही पुछता अगर उनके पास बाहरी दिखावे से परीपूर्ण चकाचौंध नहीं। इसी वर्तमान परिदृश्य को हम यहां ''भगवान बुद्ध'' द्वारा उद्धृत उक्त उक्ति से जानने का प्रयत्न करेगें,– ''धर्म कितना भी अच्छा क्यों न हों पर उसे मानने वाले अगर कमजोर होंगे, तो उस धर्म की कोई पूछ नहीं, धर्म कितना भी गन्दा हो पर अगर उसे मानने वाले शक्तिशाली और संगठित है तो वही चलेगा और जीतेगा।''

इस भांति धर्म के दृष्टिकोण को लेकर धर्मांधत व्यक्तियों की टोली एक ऐसे धर्म की तरफ खींची चली आती है। जहां पैसा, सत्ता व शक्ति सब खुलेआम बिकता है और इनके दम पर कानून के नियमों की धज्जियां उड़ाई जाती है। धर्मांधता के खिलाफत आवाज उठाने वाले को विरोध स्वरूप उसकी कीमत जान देकर चुकानी पड़ती है। विगत दशकों में घटित ऐसी अनेकों घटनाएं प्रमाण स्वरूप देखी जा सकती है। सरेआम प्रशासन व राज्य सरकारों की नाक के नीचे सब चल रहा होता है व इस पर प्रतिबंध लगाने की बजाय इन्हें क्यों बढ़ावा दिया जाता है ऐसी क्या मजबुरी रहती है जो सरकारें इसके आगे

असहाय होकर हाथ पे हाथ धरकर बैठे रहती है। ये धर्म की आड़ में इतने शक्तिशाली बन जाते है, कि खुद को भगवान समझने लगते है और यहां तक की हमारी संवेधानिक न्याय प्रणाली का भी मजाक बनाने से नही चूकते है। यह सब कोई रातों रात होने वाला तो चमत्कार है नहीं जो किसी को इसका आभास न हो। हमारी राज्य सरकारें, प्रशासन,केन्द्र तक आंखें मुंद कर क्यों बैठे रहती है क्या वे आने वाली किसी अनहोनी का इन्तजार कर रही होती है। क्यों हमारी पवित्र मातृ भूमि के पूज्यनीय धर्म–ग्रन्थों, पुराणों, वेदों की ऐसी यशस्वी भूमि जिस पर अनेकों महान ऋषि,मुनियों व संत–महात्माओं के नाम का विश्वस्तर पर मजाक बनाने का इंतजार किया जाता है। ऐसे हजारों सवाल है जो आज करोड़ो भारतीयों के जहन में रह–रहकर उठते होगें। यह सब आये दिन घटित होता है स्वयं को भगवान बताने वाले ऐसे ढ़ोगीं बाबाओं की कमी नहीं है। हमारे वर्तमान समाज में आये दिन कोई न कोई फलीभूत होता रहता है जिनका स्वयं पर नियंत्रण नहीं जो भोग,विलास,सुख–सूविधाओं के जिस दलदल से अभी तक स्वयं को नहीं निकाल पायें वे दूसरों को क्या निकालेगें, समाज को क्या नियंत्रित करेगें। और समाज के अंधश्रद्धालु कहें या भेड़ों की भीड़ जो एक के पीछे दो, दो के पीछे चार को, चार के पीछे आठ.... ।यह क्रम निरन्तर चलता रहता है और यह किसी चमत्कार की तलाश मे अंधी दोड दोडते रहते है, वहीं ऐसे ढ़ोंगी–पाखंडीयों के काले कारनामों पे परदा डालने, पैरवी करने व राजनीति को शर्मसार करने वाले हमारे राजनीतिक धर्म गुरूओं की भी कमी नहीं है जो ऐसे ढ़ोंगी, बलात्कारी बाबाओं की अगुवाई करते हुए बेहुदे बयान देते हुए दिख जाते है। ऐसे सत्ताधारिओं से हमारे देश,समाज व राष्ट्र की महिलाओं के विकास को लेकर क्या उम्मीद की जा सकती है। जिनकी दृष्टि में 'एक महिला' के साथ होने वाला अपराध शायद अपराध की श्रेणी में नहीं आता। अफसोस सत्ता की बागडोर ऐसे लोगों के हाथों में है, जो उल्टा हमारे देश की न्याय प्रणाली तक को चेतावनी देते हुए दिख जाते है, मतलब जिनके पीछे भीड़, सत्ता, शक्ति है, वे उसके दम पर किसी भी प्रकार का अपराध करने के लिए मुक्त है। कोई इन से पूछे की भारत की संस्कृति ऐसे ढ़ोंगी बाबाओं की बदौलत ही जीवित है? इस तरह के बयान देने वाले, बाबाओं की खाल में ये राजनीति के नुमाइंदे शायद यह भूल जाते है कि वर्षों की कठोर तपस्या व न्याय की दर पर उम्मीद की एक आस लिये भटकने वाली महिलाएं किसी लोभ, लालच की मुहताज़ नहीं। वह न्याय, स्वाभिमान व आत्म–सम्मान की मुहताज़ है पर जिन लोगों के लिये नाम, शौहरत, पैसा, सत्ता, शक्ति ही सब कुछ हो। जिनका दीन–ईमान सब बिक चुका हो उनके लिए 'एक स्त्री' की इज्जत और मान–सम्मान की किम्मत शायद पैसा, सत्ता, शक्ति से ज्यादा न हों और जब यही आरोप किसी आम इंसान की तरफ उठाये जाते है तो उस वक्त पैरवी करने वालों के महिलाओं की सुरक्षा व सशक्ता को लेकर बड़े–बड़े दावे किए जाते है, नये–नये कानून बनाये जाते है, उम्रकैद, फांसी की सजा की मांगे होने लगती है और जब यही उंगली किसी नामचर्ची, शक्तिसम्पन्न, शक्तिशाली, सत्ताधारी, सत्तासरंक्षित धर्मगुरूओं की तरफ उठती है तो क्यों सबके मुंह सील जाते है कि उस वक्त नारी–शक्ति, नारी सुरक्षा उसकी सशक्ता के दावे करने वाले अपने फर्ज व र्कतव्यों को क्यों भूल जाते है। वैसे भी हमारे देश की कानून प्रणाली इतनी पेचीदा है कि आम इंसान इसमें उलझने की बजाय जुर्म सहकर खामोश बैठना ही बेहतर विकल्प समझता है। रेप जैसे मामलों में तो महिलाएं वैसे भी बहुत कम खुलकर आगे आ पाती है और अगर इसी तरह के दोगले व्यवहार होते रहे तो समाज मे अपराध घटने की बजाय बढ़ेगें क्योंकि उन्हे बढ़ावा देने वाले हम खुद है। समाज का हर एक वो सख्स जो सब कुछ देखते हुए भी आंख मुंद कर बैठा है। धर्म व धर्मांधता के बीच जो अन्तर नहीं कर पा रहा है और धर्म अपने विकृत रूप

मे कब जड़े फैलाकर बैठ जाता है किसी को भनक तक नहीं पड़ती। आज धर्म का कटोरा लेकर जना–कना निकल पड़ता है, अपनी किस्मत आजमाने। ऐसी ढ़ोंगी, पाखंड़ी धर्मावलंबी हमारे देश के लिए घातक है। हमारे देश की गरीमा को शर्मसार करने वाली ऐसी घटनाएं आये दिन होती है जो अपने भक्तो को भ्रमित करते हुए धर्म की अलग ही परिभाषा गढ़ते हुए नजर आते है। जिनके भयानक परिणाम कुछ पंचकूला जैसे देखने को मिलते है, जिसने कई राज्यों को प्रभावित किया। अपार जन–धन की हानि उठानी पड़ी। क्या हमारे देश को धर्म के ऐसे बाबाओं और धर्म की ऐसी शिक्षा की जरूरत है? ऐसी धार्मिक शिक्षा देश का विकास नहीं, विनाश ही कर सकती है। देश के प्रत्येक नागरिक को इस दिशा में सोचने कि नितांत आवश्यकता है व सख्त कानून बनाये जाने की जरूरत है। धर्म का एक आर्थिक मापदंड तय हो ताकि ये अपना इतना विशाल साम्राज्य स्थापित न कर बैठे कि समाज के आम नागरिक का उसमे सांस लेना दूभर हो जाए और जिसकी कीमत लोगों के खून से चुकानी पड़े। ऐसे धर्मांधता के खिलाफ आवाज उठाने वालो की जिंदगी की कीमत जमीन पे रेंगती उस चिंटी के भांति न हो, लोकतंत्र सिर्फ नाम का न होकर प्रत्येक व्यक्ति को इसमें अपने विचारों की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता है। कम से कम अन्याय व अत्याचार के खिलाफ तो है ही। इनके पाप का साम्राज्य इतना भी जड़े न फैलाये कि आस–पास के समाज में रहने वाले अन्य लोगों के घरों की नींवें ही हीलने लगे।

अतः यह कहा जा सकता है कि उपर्युक्त विषयों पर चिन्तन करने की नितान्त आवश्यकता है और यह केवल हमारी संवैधानिक न्याय प्रणाली का ही नहीं बल्कि देश की उन तमाम सरकारों, प्रशासनिक अधिकारियों, इस देश के हर एक नागरिक का कर्तव्य बनता है कि वे इस तरह के ढ़ोंगी, पाखंडीयों को बढ़ावा न देते हुए धर्म के सही स्वरूप को पहचानें व चंद वोटों के फेर में न पड़ते हुए अपने कर्तव्य व उत्तरदायित्वों का पालन करें व अपनें कर्म के महत्व को बल देते हुए, देश की मान–मर्यादा व इसकी अस्मिता को बनाये रखने में व्यक्ति मात्र अपना कर्तव्य समझें। कोई भी वह व्यक्ति या ढ़ोंगी, पाखंडी जो धर्म की आड़ में धर्म को विकृत करते है ऐसे ढ़ोगी, पाखंडीयों के लिए 'मनुस्मृति' में कहा गया है कि :–

''धर्म एवं हतोहन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः।
तस्माद्धर्मो न हन्तवयः मानो धर्मो हतोवाधीत्।।''

अर्थात्–धर्म उसका नाश करता है जो उसका (धर्म का) नाश करता है। धर्म उसका रक्षण करता है जो उसके रक्षणार्थ प्रयास करता है। अतः धर्म का नाश नहीं करना चाहिए। ध्यान रहे धर्म का नाश करने वाले का नाश, अवश्यंभावी है। अतः–इस श्लोक के उदाहरणार्थ विगत दशकों में ढ़ोंगीयों के झूठ व पाखंड के घड़े को ढुलते हुए देखा जा सकता है।

निष्कर्षतः–

यहां समाजशास्त्री 'मैकाइवर व पेज' के परिर्वतन के चक्रिय सिद्धांत के अर्न्तगत धर्म के स्वरूप को याद किया जा सकता है। जिसमें परिर्वतन के स्वरूपों की पुनरावृति एक निश्चित अन्तराल के दौरान देखी जा सकती है, जिसके आधार पर कहा जा सकता है कि आज फिर से वर्तमान समाज का रूझान धर्म की तरफ बढ़ा है पर यह धर्म का विकृत स्वरूप है।

आज धर्म का वास्तविक स्वरूप अपनी पहचान खोता जा रहा है और अंधश्रद्धालुओं की भीड़ बढ़ती जा रही है जिनकों भ्रमित करने आये दिन समाज में तथाकथित ढ़ोगी बाबा धर्म की अपनी परिभाषिक शब्दावली लेकर उतरता है। जिनके जाल में आम जनता ही नहीं बल्कि सभ्य व सुसंकृत कहे जाने वाले प्रभुत्व समाज के लोग भी इसमें सहभागी है जो अपने कर्म के प्रति विश्वसनीय न होकर इन ढ़ोंगीं बाबाओं पर ज्यादा निर्भर है, जो अपने भक्तों का शारीरिक, मानसिक, आर्थिक शोषण करने से भी नहीं चूकते है और जिनके लिए धर्म व्यापार करने का एक माध्यम बन चुका है जिनकी कुपमण्डूकों के दम पर सफलता तय होती है क्योकिं उनके पीछे अपार अंधश्रद्धालुओं का जनसमुह डेरा डाले होते है ऐसे दिखावटी प्रभाव से शासन व प्रशासन भी प्रभावित हुए नहीं रहते है। इस प्रकार राजनीतिक स्वार्थों की बलिवेदी धर्म को चढ़ते हुए देखा जा सकता है। ये तथाकथित बाबा लोग अपार धन–संपदा, सत्ता व शक्ति के मालिक बन जाते है और अपने अति–आत्मविश्वास के चलते देश के संविधान व न्याय प्रणाली का मजाक बनाने से भी नहीं चूकते है। अतः–कहा जा सकता है कि इस प्रकार का विकृत धर्म हमारी भारतीय संस्कृती व लोकतंत्र पर तीखा प्रहार है व देश के अस्तित्व के लिये घातक कहा जा सकता है और इसमें सुधार की पर्याप्त जरूरत है जो समस्त संगठनों के सहयोग से ही संभव है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची रू.

1. http://adhyatmikprakshbindu.blogspot.in/2016/04/blog-post.html?m=1
2. http://vivek-jivan.blogspot.in/2013/08/blog-post.html?m=1
3. http://literature.awgp.org/akhandjyoti/1965/january/v2.5
4. Heehs,p(2002).indian religions:A historical reader of spiritual Expression and Experience.New York:University press,ISBN 0-814-73650-5
5. Klaus klostermaier,A survey of Hinduism.Suny press, ISBN,0-88706-807-3,chapter3:Hindu Dharma.